महंगी होती उच्च शिक्षा: ग़रीबों पर बढ़ता दबाव

संजय कुंदन

पिछले कुछ वर्षों से देश में उच्च शिक्षा लगातार महंगी होती जा रही है। ग़रीब, मेहनतकश वर्ग ही नहीं मध्यवर्ग के लिए भी हायर एजुकेशन हासिल करना आसान नहीं रह गया है। हाल तक यह माना जाता था कि कम से कम सरकारी संस्थानों में तो आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्ग पढ़ाई कर ही लेगा, पर उन संस्थानों की भी बढ़ती फीस ने इस तबक़े की उम्मीदों पर पानी फेर दिया है। इस वर्ग के लिए तो प्राथमिक शिक्षा का ख़र्च उठाना भी कठिन होता जा रहा है। यह भारत के लिए एक बड़ी त्रासदी ही कही जाएगी, जहां दुनिया की सबसे युवा आबादी रहती है।

इसमें कोई दो मत नहीं कि हाल के दशकों में समाज के वर्किंग क्लास और निम्न मध्यवर्ग (जिसे समाजशास्त्री एस्पिरेशनल क्लास कहते हैं) में यह अहसास मज़बूत हुआ है कि उनके बच्चे जीवन की दौड़ में तभी टिक सकते हैं जब वे शिक्षा प्राप्त करें। इसलिए यह समूह अब अपने बच्चों की शिक्षा के लिए हर तरह की जद्दोजहद कर रहा है। वह पेट काटकर, ज़मीन गिरवी रखकर, क़र्ज़ लेकर भी बच्चों को पढ़ा रहा है। इसके कारण पिछले डेढ़-दो दशकों में प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा में दाख़िला बढ़ा है, लैंगिक अंतर कम हुआ है। यह एक सकारात्मक संकेत है। लेकिन अगर फीस इसी तरह बढ़ती रही तो ग़रीब तबक़े को मन मारकर इस दौड़ से बाहर निकल जाना होगा। यह देश का दुर्भाग्य ही होगा। एक तरफ़ तो सरकार उच्च शिक्षा में दाख़िला बढ़ाने का लक्ष्य तय करती है, लेकिन बढ़ती फीस पर लगाम न लगाकर वह ख़ुद ही एक बड़े समूह के लिए उच्च शिक्षा के दरवाज़े बंद करने पर लगी है।

पिछले दिनों संसद में सरकार ने स्वीकार किया कि कुछ आईआईटी संस्थानों ने हाल के वर्षों में अपनी ट्यूशन फीस बढ़ा दी है। 2016 में उनमें ग्रेजुएशन की ट्यूशन फीस 90,000 से बढ़ाकर 2 लाख प्रति वर्ष कर दी गई। उनमें एमटेक और पीएचडी की फीस में भी समय-समय पर वृद्धि देखी गई है। आईआईटी में फीस वृद्धि का ताज़ा मामला गुवाहाटी आईआईटी का है, जहां इन पंक्तियों के लिखे जाने तक फीस वृद्धि के विरोध में छात्रों का प्रदर्शन जारी है। वहां पीएचडी छात्रों की कुल फीस जुलाई-नवंबर सेमेस्टर 2025 के लिए 10,900 रुपये बढ़ा दी गई है। जनवरी-मई 2025 सेमेस्टर में 34,800 रुपये फीस थी, जो कि बढ़ोतरी के बाद 45,700 रुपये हो गई है। छात्रों का आरोप है कि केंद्र द्वारा आईआईटी गुवाहाटी को मकान किराया भत्ता दिए जाने के बावजूद, पीएचडी छात्रों से हॉस्टल का किराया अलग से लिया जा रहा है।

आईआईएम (अहमदाबाद) की फीस वर्ष 2007 से 2022 के बीच 15 सालों में 4 लाख रूपये सालाना से बढ़कर 27 लाख रूपये सालाना पहुंच गई है जो कि 575 प्रतिशत की बढ़ोतरी है। देश के प्रमुख चार आईआईएम की सालाना औसत फीस 25 लाख रुपये से ज़्यादा है। जब सरकारी संस्थानों का यह हाल है तो निजी संस्थानों के बारे में अंदाज़ा लगाया जा सकता है। सरकारी नेशनल लॉ स्कूल यूनिवर्सिटी, बेंगलूरु की सालाना फीस 3.2 लाख रुपये (हॉस्टल/मेस सहित) है तो प्राइवेट क्षेत्र के जिंदल लॉ स्कूल की सालाना फ़ीस 8.92 लाख रुपये और सिम्बायोसिस लॉ स्कूल की सालाना फ़ीस 6.2 लाख है।

एक तो केंद्रीय विश्वविद्यालयों और आईआईटी-आईआईएम जैसी संस्थाओं की संख्या इतनी कम है कि कुछ चुनिंदा छात्र ही इन तक पहुंच पाते हैं। यानी उच्च शिक्षा तक पहुंचे छात्रों के एक छोटे से हिस्से का भी एक छोटा हिस्सा। एक बड़ा हिस्सा इन संस्थानों की दौड़ से पहले ही बाहर हो जाता है। कुछ साल पहले तक फीस इत्यादि कम होने की वजह से कुछेक ग्रामीण और क़स्बाई छात्र अपनी प्रतिभा और संघर्ष के बल पर ऐसे संस्थानों में किसी न किसी तरह पहुंच ही जाते

थे। लेकिन अब तो इसकी संभावना बेहद कम होती जा रही है।

जहां तक सामान्य विश्वविद्यालय या कॉलेजों का सवाल है, तो नए शिक्षा संस्थान खोलने में सरकार की रुचि न के बराबर है। सरकारी विश्वविद्यालयों को बदलते वक़्त के मुताबिक संसाधन और शिक्षक मुहैया कराने में भी वह लगातार हाथ खींच रही है। हमारी उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम, परीक्षा और परिणामों का स्वरूप कुछ ऐसा हो गया है कि छात्रों का इन पर से भरोसा उठ चुका है। यह धारणा बन गई है कि सरकारी कॉलेजों से बस डिग्री ले लेनी है ताकि नौकरी में जा सकें। मतलब एडमिशन लेना एक मजबूरी है। इसलिए पैसे लगाकर दाख़िले की औपचारिकता पूरी की जाती है और जैसे-तैसे पढ़ाई के सत्र निपटाये जाते हैं। सचाई यह है कि देश भर के ज्यादातर विश्वविद्यालय और कॉलेज अब केवल नामांकन व परीक्षा लेने के केंद्र बन कर रह गए हैं। बच्चे दाख़िला लेकर या तो कोचिंग संस्थानों का रुख कर रहे हैं या उस दौरान कोई छोटे-मोटे काम कर रहे हैं। कॉलेज की क्लासों में अमूमन सन्नाटा पसरा रहता है। लेकिन अब तो इस पर भी आफ़त आ रही है। उनकी टयूशन फीस तो बढ़ ही रही है नामांकन शुल्क, परीक्षा शुल्क में भी बढ़ोतरी जारी है। इसका ख़ामियाज़ा लड़कियों को ज्यादा भुगतना पड़ रहा है। क्योंकि परिवार में शिक्षा के मद में जब कटौती की बात आती है, तो लड़कियों की पढ़ाई ही रोकी जाती है ख़ासकर ग्रामीण इलाक़ों में। दलील दी जाती है कि लड़कियां तो बग़ैर शिक्षा और रोज़गार के भी रह सकती हैं क्योंकि उन्हें आगे चलकर मुख्यत: घर का ही काम संभालना है।

सरकार शिक्षा में निजीकरण को खुलकर बढ़ावा दे रही है। नए सरकारी संस्थान खोलना उसके लिए अब कोई एजेंडा नहीं है, बल्कि पहले से स्थापित संस्थानों के लिए भी 'स्वायत्तता' और 'स्ववित्त पोषित' (self-financing) मॉडल अपनाया जा रहा है। इसने शिक्षा संस्थानों को कमाई का स्रोत बना दिया है। प्राइवेट विश्वविद्यालय और कॉलेज तेजी से बढ़ रहे हैं, लेकिन इनकी फीस आम जनता की पहुंच से बाहर है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का दावा करने वाले ये संस्थान व्यवसायिक दृष्टिकोण से संचालित होते हैं, जिनका मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना होता है। दूसरी तरफ़ जो फीस का बोझ उठाने में सक्षम हैं, उनके बीच महंगे निजी विश्वविद्यालयों के चकाचौंध करने वाले इंफ्रास्ट्रक्चर और एजुकेशन लोन देने वाले बैंकों का भरपूर विज्ञापन कर यह संदेश देने की कोशिश की जा रही है कि निजी संस्थानों में ही उनका भविष्य सुरक्षित हो सकता है। यह धारणा स्थापित की जा रही है कि सरकारी विश्वविद्यालयों में महंगी फीस के बावजूद एजुकेशन लोन लेकर पढ़ना बहुत आसान है।

शिक्षा के अधिकाधिक बाज़ार केंद्रित होने का नतीजा यह है कि अब छात्रों पर ऋण का बोझ लदा हुआ है। रिजर्व बैंक के मुताबिक फरवरी 2017 में भारतीय छात्रों पर बकाया एजुकेशन लोन 720 अरब रुपये का था, फरवरी 2018 में दो प्रतिशत गिरावट के साथ यह 705 अरब रुपये हो गया। इनमें से 95 फीसदी लोन सरकारी बैंकों का था। प्राइवेट वित्तीय संस्थान गरीब छात्रों को लोन भी नहीं देते। वे कुछ ही सीमित कोर्स और संस्थाओं तक अपने लोन को सीमित रखते हैं जहां केवल एक ख़ास वर्ग के छात्र ही महंगी फीस देकर शिक्षा हासिल करते हैं। निश्चय ही उच्च शिक्षा से एक बड़े वर्ग का वंचित होना भारी सामाजिक असमानता पैदा करेगा और आर्थिक विभाजन को भी गहरा करेगा।